बच्चे और बूढ़े लोग

इवान चैंकर

सोने से पहले आपस में बातें करना बच्चों की आदत थी। चौड़ी अँगीठी के आस-पास वे थोड़ी देर बैठे और एक-दूसरे से जो कुछ मन में आया वो कहने लगे। धुँधली खिड़कियों में से गोधूलि झाँकने लगी, उसकी आँखें सपनों से भरी थीं; मौन छायाएँ हर कोने से ऊपर घुँघराली होकर उठने लगीं और उनके साथ उनकी अद्‌भुत परी-कथाएँ भी।

बच्चे जो कुछ दिमाग में आता, कहते जाते, पर उनके विचार थे सुन्दर कहानियों से भरे। ऐसी कहानियाँ जो सूरज और उसकी गर्मी से, प्रेम और सपनों से, बुनी हुई आशाओं से काती गईं थीं। उनका भविष्य था एक लम्बा; कान्तिमान छुट्टी का दिन; उनके क्रिसमस और ईस्टर के बीच में कोई 'एश वेन्सडे' नहीं आता था। रंगीन पर्दों के पीछे जीवन उमड़ता था, चुपचाप चमकता हुआ और एक प्रकाश से दूसरे प्रकाश तक और भी चमकता। उनके शब्द थे आधी समझी गई फुसफुसाहटें। किसी

भी कहानी का कोई आरम्भ नहीं था; न स्पष्ट बिम्ब था, ना तो कोई परी-कथा थी और न ही कोई अन्त। कभी-कभी चारों एक साथ बोल उठते, फिर भी कभी भी किसी ने दूसरे का ध्यान भंग नहीं किया; सबके सब उस विस्मय भरे सुन्दर स्वर्गीय प्रकाश की ओर आकृष्ट होकर देखते रहे। ऐसे परिदृश्य में प्रत्येक शब्द से गूँज उठती है। प्रत्येक कहानी का एक शानदार अन्त होता है।

बच्चे एक-दूसरे से इतने मिलते-जुलते थे कि आभा में, सबसे छोटी चार बरस की तौन्चेक का चेहरा अलग से नहीं पहचाना जा सकता था, सबसे बड़ी दस बरस की लौंज़का नाम की लड़की से। सब के वैसे ही छोटे-छोटे चित्रों जैसे नन्हे चेहरे थे और खुली-खुली सपनीली आँखें।

पर आज की इस विशेष शाम को विदेश से आया हुआ कुछ अज्ञात, हिंसक हाथ से, स्वर्गीय प्रकाश में फैल आया था और उन छुट्टियों में उन कहानियों, परी-कथाओं में निर्ममता से आघात करता था: डाक से यह खबर आई थी कि इटली में पिता 'खेत हो गए' थे। हाँ, पिता मारे गए थे और एक अज्ञात अजनबी, नया और अदम्य उनकी राह में आ गया था। वह वहाँ खड़ा था ऊँचा, विशाल, जिसका न चेहरा, न आँखें, न होंठ, कुछ नहीं थे। वह कहीं भी नहीं अँटता था, न गिरजे के दरवाज़े की कोलाहलमयी ज़िन्दगी में, न सड़कों पर, न उस अँगीठी के ऊष्ण संधि-प्रकाश में, न उनकी परी-कथाओं में। वह किसी भी तरह सुखी नहीं था और फिर भी विशेष दुखी भी नहीं था, क्योंकि वह मरा हुआ था; उसकी आँखें नहीं थीं कि वह दृष्टि से कुछ व्यक्त करे, मुँह नहीं था कि वह शब्द से कुछ कहे 'कि वह क्यों और कहाँ से आया।' विचार वहाँ विवश, ठिठका, सहमा-सा खड़ा था इस विराट छाया के आगे, मानो वह एक मज़बूत काली दीवार के आगे खड़ा हो और कहीं बढ़ नहीं पा रहा हो। वह छाया दीवार के पास आई, शब्दहीन खड़ी रही और उनकी ओर एकटक देखने लगी।

तौन्चेक ने जैसे सपने में पूछा हो, "तो वे अब घर कब आएँगे?"

लौंज़का ने उसकी ओर गुस्सैल नज़र का चाबुक चलाया।

"अगर वे खेत हो गए तो कैसे लौटेंगे?"

सब चुप थे। चारों उस मज़बूत काली दीवार के आगे खड़े थे, उससे परे नहीं देख पा रहे थे।

"मैं भी लड़ाई पर जाऊँगा।" सहसा सात बरस का मतीजा बोला, मानो उसने अपनी तेज़ बुद्धि से एक सही विचार को पकड़ लिया था और जानता था कि ठीक-ठीक क्या कहा जाए?

"तुम बहुत छोटे हो," चार बरस की तौन्चेक ने, जो अभी भी पेटीकोट पहनती थी, उसे गहरी आवाज़ से डाँट दिया।

विल्का, जो सबसे छोटी और कमज़ोर थी, और जो अपनी माँ की बड़ी-सी शॉल में लिपटी थी, मानो वह किसी राह-चलते की गठरी हो, ऐसे नरम शाँत स्वर में पूछ बैठी मानो वह कहीं अँधेरे में से आ रही हो, "बताइए लड़ाई कैसी होती है, मतीजा.... हमें कोई कहानी सुनाओ!"

सो मतीजा ने समझाया, 'अच्छा, लड़ाई का मतलब यह होता है कि लोग लोगों को चाकू से मार देते हैं, तलवारों से काट डालते हैं या बन्दूकों से उड़ा देते हैं। जितना ज़्यादा तुम मारो-काटो, उतना ही बेहतर। और कोई कुछ नहीं कहता, किसी को भी; क्योंकि ये तो ऐसे ही हुआ करता है, होना ही चाहिए इसका नाम है लड़ाई।

"पर वे क्यों मार-काट डालते हैं?" उस कमज़ोर लड़की विल्का ने पूछा।

"राजा के लिए।" मतीजा चीखा, और वे सब चुप हो गए। बहुत दूर कहीं उनकी धुँधली आँखों के आगे ऐसा कुछ दिखाई दिया जो कि भयोत्पादक था, एक चमकीला प्रकाश एक और भी चमचमाते आभामण्डल के नीचे। वे ज़रा भी नहीं हिले, उनकी साँस को साहस ही नहीं हुआ कि होंठों से बाहर निकलती, मानो वे सब गिरजे में किसी गम्भीर प्रार्थना में बैठे हों।

अब मतीजा अपने कँपकँपाते हाथों से इशारे करने लगा और फिर अपने विचार पर अड़ गया, शायद चारों ओर से घिर आई चुप्पी को तोड़ने के लिए।

वह चिल्लाया, "मैं भी लड़ाई पर जाऊँगा। दुश्मन मुर्दाबाद!"

सहसा, भीनी आवाज़ में, विल्का ने पूछा, ''दुश्मन कैसा होता है?... उसके सींग होते हैं?'

तौन्चेक ने गम्भीर होकर गुस्से में जोड़ दिया, "ज़रूर, ज़रूर उसके सींग होते ही हैं... अगर सींग न होते तो वह शत्रु कैसे होता?" मतीजा को पता भी नहीं चला कि इस बात पर क्या कहे, "मुझे लगता है सींग नहीं होते," उसने धीरे-धीरे कहा, सबसे आखिर में। पर फिर रुक गया, चकित होकर। "उसके सींग कैसे हो सकते हैं?" उसने कहा, "वह तो हमारी ही तरह इन्सान है।"

लौंज़का गुस्से और शिकायत से रो पड़ी,

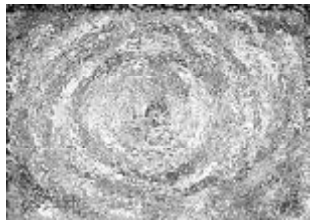

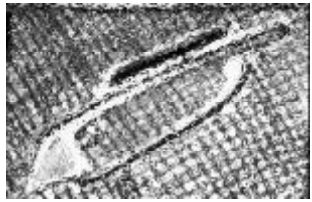

फिर विचारों में डूब गई। किन्तु एक क्षण बाद उसने कहा, "सिर्फ उसकी आत्मा नहीं होती!"

बड़ी देर तक विचार करने के बाद तौन्चेक ने कहा, "कोई आदमी लड़ाई में खेत हो जाता है तो उसका क्या मतलब होता है? क्या वह पीछे गिर पड़ता है?"

"इसका मतलब वे उसे मारते हैं.... इतना मारते हैं कि वह मर जाता है," मतीजा ने शान्त भाव से समझाया।

"डैडी ने मुझ से वादा किया था कि वे अपने साथ अपनी बन्दूक ले आएँगे।"

"अगर वे खेत में गिर गए हैं तो वे कैसे ला सकते हैं?" लौंज़का ने गुस्से से जवाब दिया।

"यानी उन्होंने डैडी को मार डालने तक पीटा?"

"हाँ, मर जाने तक।"

आठ छोटी-छोटी खुली आँखें एकटक देखती रहीं, आँसू-भरीं और गोधूलि में डरी-सहमीं किसी अज्ञात चीज़ की ओर देखती रहीं, जिसे न दिल, न दिमाग, कुछ नहीं पकड़ सका ।

यह सब चल रहा था तब दादा और

दादी घर के सामने बेंच पर बैठे थे।

सूर्यास्त की अन्तिम रक्तिम किरणें बगीचे के अँधेरे पत्तों में से छन रही थीं। संध्या शान्त थी। सिर्फ अस्तबल से, जहाँ उनकी माँ तरुण पशुओं को देखने गई थी, हृदयविदारक, गले को रुँधने वाली, सिसकियाँ और हिचकियाँ रुक-रुक कर सुनाई दे रही थीं।

दो बूढ़े लोग सटकर बैठे थे, नीचे झुके हुए, एक-दूसरे के हाथ पकड़े, जैसे कि वे कई वर्षों पहले बैठे थे। अश्रुहीन आँखों से वे डूबते हुए सूरज की ओर एकटक निहार रहे थे और वे कुछ नहीं बोले।

इवान चैंकर: प्रसिद्ध स्लोवानियाई लेखक। अनेक कविता, कहानियाँ, लघु उपन्यास, नाटक आदि लिखे। इनके लेखन में तत्कालीन स्लोवानियाई समाज की समस्याएँ साफ दिखाई देती हैं।
अँग्रेज़ी से अनुवाद: प्रभाकर माचवे - हिन्दी के प्रतिष्ठित कवि-लेखक और अनुवादक। अज्ञेय द्वारा सम्पादित तारसप्तक के एक कवि। अनेक पुस्तकें प्रकाशित।
सभी चित्र: जितेन्द्र ठाकुर - एकलव्य, भोपाल में डिज़ाइन एवं प्रोडक्शन इकाई में कार्यरत।
यह कहानी साहित्य अकादमी द्वारा प्रकाशित किताब सात युगोस्लाव कहानियाँ (1966) से साभार।